Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
January to March 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLV

मालवा के खिलचीपुर राज्य का उदय एवं विस्तार एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. ओमप्रकाश गेहलोत*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, शामगढ़, जिला मंदसौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना - खिलचीपुर राज्य का उदय कैसे हुआ? इस संबंध में अलग-अलग ग्रंथों में अलग-अलग जानकारी प्राप्त होती है। इस संबंध में शोध कार्य करने पर प्रथम ग्रंथ खि.रि.की ह.ख्यात से जानकारी प्राप्त होती है। जिसके अनुसार जब रायसल के द्वारा गागरोनगढ़ का क्षेत्र दबा लिया तो, उस परिस्थिति में उसने खाताखेड़ी के भील ठाकुर चक्रसेन और रामकिशन की मदद से मनोहर थाना के क्षैत्र को अपना निवास स्थान बनाया। इन दोनो शासको की मदद से वह बादशाह शेरशाह से मिला और बादशाह की शाही सेवा में सम्मिलित हो गया, उसने बादशाह शेरशाह की सेवा मन लगाकर की। अवसर पाकर उसने रायसल के द्वारा धोखा करने की कहानी बादशाह को सुनाई। बादशाह ने प्रसन्न होकर उसको गागरोन तो समर्पित नही किया, क्योंकि वह क्षेत्र अब रायसल के नाम मुगल सत्ता ने स्वीकार कर रखा था। अत: उसको एक नवीन राज्य जो कि सारंगपुर के पास में स्थित खेजड़पुर था। वहाँ पर जाकर अपना राज्य स्थापित करने की अनुमति प्रदान की। उग्रसेन ने मालवा में आकर नाहरढा नामक गाँव बसाया और वहाँ पर निवास करना शुरू किया और खेजड़पुर का नाम खिलचीपुर कर 1544 ई. में राव उग्रसेन के नाम से गद्दी पर बैठा, परंतु खि.रि.की ह.लि.ख्यात में उल्लेखित इस घटना का समर्थन भ.रा.मं ग्रंथ एवं मालवा का गजेटियार के आधार पर नही होता। इन दोनो ग्रंथों के आधार पर ज्ञात होता है, कि राव उग्रसेन को उसकी सेवाओं से प्रसन्न होकर मुगल बादशाह अकबर ने खिलचीपुर की सनद प्रदान की थी।[1]

तत्कालीन स्त्रोतों से जानकारी प्राप्त होती है कि मऊगढ़ का शासक वेणीदास का बेटा राव दब्बूजी 1505 ई. में मऊ की गद्दी पर बैठे। उनकी दो रानियाँ थी। एक ढाड़मदे कंवर और दूसरी कसमावती राठौरनी और इसी दूसरी रानी के दूसरे पुत्र मानसिंहजी राव दब्बूजी के पश्चात् गद्दी पर बैठे। इनकी दो रानियाँ थी, इनमें से दूसरी रानी बखतकंवर गेहलोतनी के पुत्र चक्रसेन एवं उग्रसेन थे। उन्ही में से मानसिंह के द्वितीय पुत्र उग्रसेन ने 1544 ई. में खिलचीपुर राज्य की स्थापना की।[2]

इस प्रकार स्पष्ट है कि खिलचीपुर राज्य की स्थापना 1544 ई में मानसिंह के द्वितीय पुत्र उग्रसेन के द्वारा की गई। जिसका समर्थन समस्त स्त्रोत करते है।

खि.रि.की ह.लि.ख्यात् और भा.रा.मं. के ग्रंथ के आधार पर खिलचीपुर के राव उग्रसेन से लगााकर उसके अन्य शासको की वंशावली का वंशवृक्ष तैयार करने पर उसके शासको का क्रम इस प्रकार है-

1. उग्रसेन (गागरूनगढ़ के खींची चौहान वंश वृक्ष में नं.14 वाला) खिलचीपुर
2. वाघसिंह
3. करणसिंह (खिलचीपुर) 3-नागसिंह (वेणनपुर)
4. हटीसिंह (खिलचीपुर) 4-किशनसिंह
5. अनोपसिंह 5-फतहसिंह5-ढोलतसिंह5-सरदारसिंह5-सूरजमल 5-बसनसिंह 5-पृथ्वीसिंह 5-जसवन्तसिंह 5-मनोहरसिंह 5-अनोपसिंह
6. फतहसिंह 6-हिम्मतसिंह
7. अभयसिंह 7-रूपसिंह 7-हिन्दूसिंह
8. ढीपसिंह
9. दुर्जनसाल
10. शेरसिंह (गोद)
11. अमरसिंह (गोद)
12. भवानसिंह 12-करणसिंह 12-फतहसिंह 12-माधुसिंह 12-हटेसिंह 12-मानसिंह
13. दुर्जनसाल 13-विश्वनाथसिंह[3]

विभिन्न सीमावर्ती राज्य व उनसें संबंध

बूँदी एवं कोटा राज्य से संबंध - इस क्षैत्र पर हाड़ा राजपूतों का प्रभाव रहा। राव हाड़ा एवं उसके पश्चात् के अनेक शासक बम्बावदे में अनेक वर्षो तक राज्य कार्य करते रहे। आगे चलकर इस वंश में बंगदेव का यशस्वी पुत्र कंवरदेव हुआ, यह बड़ा ही वीर था। उसके समय में हाड़ाओं के राज्य का चहुँओर विस्तार हुआ। उसी के समय में बूंदी नगर इस राज्य की दूसरी राजधानी बनाया गया।

आरंभिक समय में बूंदी पर मीणा लोगो का अधिकार था। मीणाओ का शासक जैता बहुत ही शक्तिशाली शासक था। वह चाहता था कि उसके पुत्रो का विवाह राजपूत कन्याओं के साथ होना होना चाहिए। उसके राज्य की सीमा राजपूतों के बम्बावदा राज्य से मिली हुई थी, इस कारण से ढोनो राज्य अपना प्रसार करने के उद्देश्य से आपस में संघर्ष करते रहते थे। कभी मीणा अपनी सीमा का प्रसार करते, कभी राजपूत अपनी सीमा का प्रसार करते। इस प्रसार से मीणा काफी शक्तिशाली हो गए थे। अपनी शक्ति का प्रसार करने के पश्चात् जैता ने राजपूत शासक कंवर देवसिंह की पुत्रियों से अपने पुत्रों के विवाह का प्रस्ताव रखा। उसके प्रस्ताव को अस्वीकार करना राजपूतों के लिए संभव नही था। तत्कालीन समय में इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिल जाते है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
January to March 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLV

उस युग में तलवार की शक्ति ही प्रमुख मानी जाती थी। जिसके हाथ में सत्ता होती थी, उसको क्षत्रियों के समान मानकर उनके साथ वैसा हि बर्ताव किया जाता था। उसके प्रस्ताव के संबंध में देवसिंह ने कहलवाया, कि यदि मीणा शासक अपने घृणास्पद हीन प्रथाओं को छोड़कर उनकी संस्कृति का अनुकरण करे, तो वह उनके साथ में अपने भाई जसकरण की पुत्र्यों का विवाह करने को तैयार है।[4]

इस प्रकार विवाह प्रस्ताव के पश्चात् विवाह की तैयारियॉ होने लगी। विवाह हेतु उमरथूर नामक गाँव में मण्डप सजाया गया। विवाह हेतु देवीसिंह अपनी कन्याओं को लेकर निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच गया। देवनसिंह ने अपनी पत्नी मदनावती को भी उस स्थान पर बुलवा लिया। मीणों को किसी भी प्रकार का संदेह नही हो पाए, इसकी पुरी व्यवस्था की गई। मीणो के स्वागत की तैयारी के लिए एक बाढ़े को तैयार करवाया गया। उस बाढ़े में जहाँ पर बारात को ठहराने की व्यवस्था की गई थी। उस स्थान पर नीचे बारूद को बिछा दिया गया। जब मीणों की बारात उस स्थान पर आई। उसी समय में बारूद में आग लगा दी गई। जिसके कारण अधिकांश मीणा उसमे जलकर मर गए और जो जिंदा बचे उनको युद्ध में मार डाला गया। इस प्रकार धोखे के माध्यम से मीणो पर विजय प्राप्त की गई, हो सकता है कि उन्होने जानबूझकर यह युक्ति अपनाई हो, क्योंकि युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए शासक किसी भी प्रकार की चाल को अपना सकते थे। इसका कारण यह भी है कि कुछ समय पूर्व में कोटा के भीलों तथा सिरोही के मीणों पर इसी प्रकार राजपूतों ने विजय प्राप्त की थी।

अत: धोखा देकर शत्रुओं पर विजय प्राप्त करना, उस समय में सामान्य प्रथा थी। केवल प्रश्न यह पैदा होता है, कि भारत में बारूद का प्रथम प्रयोग तो बाबर ने आरंभ किया था। अत: कैसे इस कहानी पर विश्वास किया जावे। यह संभव हो सकता है, कि युद्ध के साथ में छल करना मध्य युग की एक सामान्य विशेषता थी, परंतु यह भी याद रखना चाहिए, कि राजपूत अपनी आन बान शान के साथ में युद्ध करते थे और युद्ध के नियमों का भी पालन करते थे। अत: इन कहानियों पर आंख मुंदकर विश्वास नही करना चाहिए।[5]

कोटा पर अधिकार – हाड़ा राजपूत शासकों ने अपने प्रभाव में बूंदी को कर लिया। वहाँ पर अपनी शासन सत्ता स्थापित कर ली। उस परिस्थिति में बूंदी राज्य का संघर्ष कोटा से प्रारंभ होने लगा और इन संघर्षो का प्रभाव बूंदी की शांति व्यवस्था पर पड़ा। इसका कारण यह था कि जब हाड़ाओं का बुंदी पर अधिकार हुआ, तो उनकी सीमा चम्बल तक आ पहुँची, जिससे ये संघर्ष बडते गए। इसलिए समरसी को चम्बल पार करके इन लोगो को दबाना आवश्यक हो गया। उसने भील शासकों को दबाया व उनकी शक्ति को तोड़ने के सफल प्रयास किए। वह यहाँ तक ही संतुष्ट नही रहा, उसने मउ, सांगोद, कैथून, सीसवाली, बडौद, रैलावन, रामगढ़ आदि स्थानों को गौड़, पँवार, मेद राजपूतों से छीनकर अपने राज्य का विस्तार कर लिया। उसने एक काम अवश्य किया। उसने इनका समूल नाश नही करके, इनको अपना अधिपत्य स्वीकार कराके पुन: उनके राज्य उनको वापस कर दिए। उनसे यह अपेक्षा की गई, की उनको समय–समय पर भेंट नजराना आदि देना पड़ेगा। जिससे इन शासकों की सद्भावना भी उसको प्राप्त हुई और इसके बदले में उनसे सैनिक सहायता की भी संभावना थी।

इन राजपूत शासकों से निपटने के पश्चात् कोटा के शासक कोट्या को रोकना अति आवश्यक था। अहेलागढ़ के पास में कोट्या एवं समरसी का आमना सामना हुआ। इस युद्ध में समरसी का साथ उसके अनेक अधिनस्थ शासकों के द्वारा दिया गया, जिनमें समरसी के द्वारा पराजित अनेक राजपूत शासक भी थे। यह युद्ध बहुत ही भीषणता के साथ लड़ा गया। भीलों की ओर से 900 और हाड़ों की ओर से 300 सिपाही इस युद्ध में हताहत हुए। युद्ध में कोट्या अपने प्राण को बचाकर भाग गया और अज्ञात स्थान पर जाकर छिप गया। इस युद्ध में विजय होने के पश्चात् जब वह बूंदी पहुँचा, तो वहाँ पहुँचकर उसने अपने तीसरे पुत्र जेतसी का विवाह कैथून के तंवर सरदार की पुत्री के साथ में कर दिया।

इस विवाह के पश्चात् समरसी जब अपने ससुराल में निवास कर रहा था। तब उसके मन में एक योजना आई, जिसके माध्यम से वह भीलों का विनाश करना चहता था। जैतसी अपने लिए एक नये राज्य की सोच रहा था और इस हेतु उसने अपने ससुर से और अपने पिता समरसी से भी अनुमति ले ली। जैसाकि पूर्व में बूंदी राज्य को हस्तगत किया गया था। उसी आधार पर एक षड़यंत्र किया गया। जिसके अनुसार जैतसी ने भीलों से अच्छे संबंध बनाने का दिखावा करके उनके साथ में दोस्ती का हाथ बढ़या और इस संबंध को और भी प्रगाढ़ करने के उद्देश्य से भीलो को अमंत्रित किया गया। भीलों को बुलाने के पहले जिस स्थान पर भीलों को दावत देने की योजना थी उस स्थान पर नीचे बारूद को बिछा दिया गया। इस बात से अनजान भीलों को बुलाया गया और वहाँ पर दावत का आयोजन किया गया। भीलों की खुब आवभगत की गई और उनको जमकर शराब पिलाई गई। जब सब भील नशे में चूर हो गए, तब उस स्थान पर चुपके से आग लगवा दी गई। जिसमें अनेक भील मारे गए। अब जो भील बच गए, उन्होने कोट्या भील के साथ में युद्ध किया, परंतु उनकी कोई योजना नही होने व अव्यवस्था के कारण उनकी हार हुई और उनको मौत के घाट उतार दिया गया। इस युद्ध में जैतसिंह के साथ में एक पठान जिसका नाम सैलारखां था, उसने राजपूतों के लिए अपना सर्वस्व बलिदान दिया। उसके सम्मान में जैतसी ने कोटा में सैलारगाजी का दरवाजा बनवाया। इस प्रकार धोखा करके जैतसी ने संवत् 1264 में कोटा राज्य पर अपना अधिकार कर लिया।[6]

अब कोटा राज्य का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो गया और वह जैतसी की व्यक्तिगत जागीर बन गया, लेकिन जैतसी ने स्वतंत्र राज्य स्थापित करने का प्रयास नही किया। अब बूँदी का राज्य विस्तृत हो चुका था। बुँदी के राज्य पर दो ओर से आक्रमण होने की आशंका हो गई। एक और से तो सासावली, बड़ौद, रामगढ़, कैथून, पलायथा आदि स्थानों के वो राजपूत शासक थे जो अभी कुछ समय पूर्व ही बूँदी के राज्य की अधिनता में आए थे। ये सभी राजपूत शासक अपनी पराजय को भूल नही सके थे। ये अपने राज्यों को प्राप्त करने के प्रयास हमेशा करते रहते थे। जब भी बूंदी के शासक अपनी व्यक्तिगत परेशानियों में लगे रहते थे। उस समय में वो स्वतंत्र होने का प्रयास करते रहते थे। दूसरी ओर बम्बावदे राज्य के उपर चित्तौड़ हमेशा अपनी गिद्ध दृष्टि लगाए हुए था। अलाउद्दीन ने अपने जीवित रहते चित्तौड़ को अपने प्रभाव में रखा। अलाउद्दीन की मृत्यु के पश्चात् उसका समूचा साम्राज्य समाप्त हो चुका था। इस समय का फायदा उठाकर चित्तौड़ स्वतंत्र हो गया था और वह अपना प्रभाव फैलाना चाहता था। इस दृष्टि से वह बम्बावदा और मांडलगढ़ पर अपना अधिकार करना चाहता था। चित्तौड़ ने आगे बढ़कर बम्बावदा और मांडलगढ़ पर अपना अधिकार कर लिया।

हाड़ा शासक इन राज्यों पर अपना पुश्तैनी अधिकार समझते थे। इनको पुन: अपने अधिकार में करने के लिए संघर्ष प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार ये

राज्य कभी हाड़ो के अधिकार में जाते, तो कभी मेवाड़ के अधिकार में चले जाते। इस प्रकार इन राज्यों में निरंतर संघर्ष की स्थिति बनी रही। इस संघर्ष के मध्य में बूँदी का जैष्ट राजकुमार नारायणदास बढ़ा ही वीर और पराक्रमी हुआ। उसने अपने भ्रष्ट काकाओं से बूँदी को वापस छीन लिया और उस पर अपना अधिकार कर लिया। उसने अपने राज्य को मजबूत बनाया और सरदारों की आपसी शत्रुता को समाप्त कर अपने राज्य को श्रेष्ट स्थिति में पहुँचा दिया। उसके महाराणा सांगा से मधुर संबंध थे। शक्तिशाली होने के कारण जब मालवा के सुल्तान ने उदयपुर पर आक्रमण किया, तो उसने महाराणा सांगा को सहायता प्रदान की। वह अनेक अवसरों पर महारणा सांगा से मिला और उनका बड़ा परम मित्र था। इससे यह समझा जा सकता है, कि नारायणदास बड़ा वीर और प्रभावशाली शासक था। वह उस समय के महान शासकों में अपनी पैठ बनाए रखता था, और अनेक अवसरों पर उनकी सहायता भी करता था।[7]

राव सुर्जन ने कोटा के पठान शासको से कोटा पुन:छीनकर अपने राज्य में मिला लिया था परंतु इसके लिए राव सुर्जन को बड़ा कठोर संघर्ष करना पड़ा। इसका एक कारण यह था, कि इस समय में मालवा पर अकबर के सेनापति आधमखां ने 1560 ई. में आक्रमण कर बाजबहादुर को पराजित कर दिया था। उसने मालवा को मुगल साम्राज्य में मिला लिया था। अत: मालवा के सुल्तानों का डर समाप्त हो गया था। इसलिए राव सुर्जन ने आक्रमणकारी शक्ति को अपनाकर अपने वंश का राज्य स्थापित किया और उसमें सफलता प्राप्त की।

बूंदी का राज्य अपनी स्वतंत्र सत्ता को अधिक समय तक जीवित नही रख पाया। उस समय में कोटा और उसके आस-पास के परगने केसरखां और डोकरखां नामक पठानों के नियंत्रण में थे। कोटा के उत्तर का राज्य रायमल के कब्जे में था। सुल्तानपुर में सुल्तानसिंह अपने आप को संभल कर रख रहे थे। रामगढ़, पलायथा और अन्य स्थानों पर 20 राजपूत जागीरदार बूंदी से पृथक हो गए थे, परंतु उनका संबंध बूंदी से बना हुआ था, वे बूंदी के राज्य की सेवा में हमेशा तत्पर रहते थे। उधर दोनो पठान भाइयों ने अपनी सेनाओं की व्यूह रचना कर रखी थी। भदाना नामक स्थान से 2 मील दूर दोनो सेनाओ में घमासान युद्ध हुआ। युद्ध के बीच में राव सुर्जनसिंह के भाई मानसिंह ने भयंकर गर्जना के साथ केसरखां पर धावा बोला और केसरखां का सिर धड़ से अलग कर दिया। अपने भाई के वध से क्रोधित होकर डोकरखां ने तेजगति से आगे बड़कर और सेना को चीरकर मानसिंह के पास पहुॅंचा और उसका सिर काट डाला। सिर कट जाने के पश्चात भी मानसिंह कुछ क्षणों तक लड़ता रहा। जिसके बारे में वंश भास्कर में लिखा गया 'भिरि सीस हीन हुमान कछु खिन भान ज्यों हनतो भयो।'[8]

इस कृत्य को देखकर एक अन्य जागीरदार जो कि गनोली से संबंधित था। उसका नाम रामसिंह था। रामसिंह मानसिंह की वीरता से इतना प्रभावित हुआ कि वह डोकरखां पर झपट पड़ा और घमासान युद्ध होने लगा। तभी डोकरखां का भतीजा मेहराबखां बड़ी वीरता के साथ में युद्ध क्षैत्र में डटा हुआ था, तभी एक हाड़ा वीर ने उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। उस वीर का रूण्ड भी कुछ समय तक युद्ध करता रहा। तब बालकर्ण नामक योद्धा ने उसके दो टुकड़े कर दिए मेहराबखां की वीरता पर वंश भास्कर में लिखा है- 'बालकीर्ण तहं तस बंधु काय कवध को सुद्धिधा करयो।'[9]

इन वीरों के करारनामों के बाद युद्ध ने और भयानक रूप ले लिया। गुलामनबी नामक मुसलमान ने राव सुर्जन पर दो बाण छोडे, परंतु निशाने पर नही लगे। इस उत्साह के साथ में गुलामनबी और आगे बढ़कर युद्ध क्षैत्र में प्राणों का मोह छोडकर पुरी क्षमता के साथ में लड़ने लगा। इसका जवाब हाडा़ओं ने दिया और प्रत्युत्तर में उनके उपर हमला किया इस हमले में गुलामनबी और उसके तीन मुख्य सैनिक मारे गए। इस घटना के बाद मुसलमानों का उत्साह ठंडा पढ़ने लगा और उन्होने युद्ध क्षैत्र छोड़ दिया और कोटा नगर की ओर भागने लगे। हाड़ाओं के अंदर जबरदस्त उत्साह था। क्योंकि उन्होने मुसलमानों की सेना को युद्ध का मैदान छोड़कर भागने के लिए मजबूर किया था। अत: उन्होने भागती हुई सेना का पीछा किया। जब पठान नगर के अंदर घुस गए, तो हाड़ओं ने उनसे नगर के अंदर भयंकर युद्ध किया। नगर के अंदर डोकरखां का भाई सैलारजी असाध्य रोग से ग्रस्त था। उसने अपने वीरता के गुणों से लबरेज होकर अपने धर्म का पालन किया और बड़े ही पराक्रम और शान के साथ में हाड़ाओं से लड़ा। वह अपने बाहुबल से डटकर लंबे समय तक सामना करता रहा। फिर एकाएक कीर्तिसिंह नामक राजपूत ने उस पर हमला किया और वह धराशाही हो गया। जिस स्थान पर उस वीर ने वीरगति प्राप्त की, वह स्थान दरवाजा सैलारगाजी कहलाता है। इस संबंध में अलग-अलग ग्रंथों में अलग-अलग तथ्यों की जानकारी प्राप्त होती है। ठाकुर लक्ष्मणदास के अनुसार सैलारगाजी जैतसिंह का सैनिक था। उसने भीलों के विरूद्ध लड़ते हुए और जैतसिंह के लिए अपना बलिदान दिया और इसी की याद में दरवाजा सैलारगाजी को स्थापित करवाया गया। अत: इन दो परस्पर विरोधी तथ्यों में किस तथ्य को प्रमाणित स्वीकार किया जाए। इस पर परस्पर अंतर्विरोध है। बहरहाल इसी युद्ध में डोकरखां मारा गया और पठानों को पराजित किया जा सका। इस प्रकार पठानों के अधिपत्य में 26 वर्ष रहने के पश्चात् कोटा राज्य पर फिर से हाड़ाओं का अधिकार स्थापित हो गया। इस राज्य पर अधिकार करने में राव सुर्जन को अपने अनेक यौद्धाओ को खोना पड़ा। इस प्रकार एक समय हाड़ाओं के हाथ से खों जाने के बाद वह राज्य कठोर संघर्ष के पश्चात और राव सुर्जन के उत्साह और साहस के कारण पुन: हाडा़ओं के हाथ में आ पाया। इस विजय से राव सुर्जनसिंह की कीर्ति और उसका यश चहुँओर फैल गया।[10]

इस प्रकार स्पष्ट है कि खींची सरदारों ने राज्य के जिन हिस्सों पर अधिकार कर लिया था। उन सरदारों को अपने प्रभाव में लेने के लिए राव सुर्जन को ज्यादा मेहनत नही करनी पड़ी। रायमल खींची जो की मऊ में अपने प्रभाव को स्थापित किए हुए था। उसने कोटा के उत्तर में सीसवाली और बड़ौद के परगनों पर अपना अधिकार जमा लिया था। राव सुर्जन ने रायमल से युद्ध किया। उस युद्ध में रायमल ने बढ़े ही उत्साह के साथ में संघर्ष किया परंतु उसकी पराजय हुई। इस संघर्ष में राव सुर्जन का एक वीर सैनिक कीर्तिसिंह मारा गया, परंतु राव सुर्जन ने समस्त क्षैत्र पर अपना अधिकार कर लिया और उससे वे सब परगने छीन लिए, जिस पर उसने अधिकार कर लियाा था। इस प्रकार से राव सुर्जन ने अपने वंश के राज्य के सम्पूर्ण भाग पर अधिकार करने के पश्चात् और कोटा नगर पर अधिकार करने के पश्चात् बूंदी नगर में विजेता की भांति प्रवेश किया ।

हाड़ाओं से राज्य छीनना - हाड़ा शासक शनै: शनै: आगे बढ़ते रहे और उन्होने राजस्थान के सर्वाधिक प्रतिष्ठित गढ़ रणथंबोर पर अधिकार कर लिया। रणथंबोर पर अधिकार उनका अंतिम चरण था। इसके पश्चात् उनकी स्थिति कमजोर होना शुरू हो गई। आठवीं से सोलहवीं शताब्दि तक का समय चौहान शासकों ने पूर्णरूप से सत्ता का उपभोग किया। उनके आंतरिक मामलों में शक्तिशाली शासको का हस्तक्षेप नही रहा। मुहम्मद गौरी ने जो

राज्य प्राप्त किया था। वह राज्य पृथ्वीराज चौहान को समाप्त करने के पश्चात् प्राप्त किया था। इस प्रकार पृथ्वीराज ने गौरी की अधिनता को स्वीकार नही किया था। अत: पृथ्वीराज के अनेक सरदारों से भी संघर्ष करने के पश्चात् ही विभिन्न किलों पर मुहम्मद गौरी और उसके वंशजों का अधिकार हो पाया। इसी आधार पर बम्बावदे के राज्य पर जब अलाउद्दीन खिलजी ने अभियान किया, तो बम्बावदे के दुर्ग की रक्षा करते हुए समरसी और हरराज जैसे वीरों ने अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। तभी अलाउद्दीन का उस गढ़ पर अधिकार स्थापित हो पाया। बूंदी के राज्य पर अधिकार करने के लिए अनेक बार मालवा के सुल्तानो ने प्रयास किए और उन प्रयासों मे एकाध बार उनको सफलता भी प्राप्त हुई। एक समय में तो बूंदी के दो राजकुमारों को बलात मुसलमान भी बना लिया था। परंतु इन संघर्षो के बावजूद भी हाड़ाओं को झुकाने में सफल नही हुए। इस प्रकार अंत तक उन्होने अपने घुटने नही टेके। केसरखां और डोकरखां ने 26 वर्ष तक कोटा में अपना राज्य स्थापित रखा और बीरमदेव को कठिन परिस्थिति में वहाँ से भागना पढ़ा, फिर हाड़ाओं ने निराशा को अपने पास नही आने दिया और उनका लगातार संघर्ष जारी रहा और उपयुक्त अवसर की प्रतिक्षा करते रहे। यह अवसर उनको राव सुर्जन ने प्रदान कर दिया। राव सुर्जन के रूप में हाड़ाओं को एक ऐसा सुयोग्य शासक मिला, जिसने हाड़ाओं के गौरव को चहुँओर फैला दिया। राव सुर्जनसिंह हाड़ा न केवल सुयोग्य और बुद्धीमान शासक था, बल्कि वह बड़ा ही प्रतापी शासक था। जिसने पठानों से न केवल कोटा छीन लिया, बल्कि अपने राज्य को भी सुसंगठित किया। परंतु जैसे ही सल्तनत काल का अंत हुआ और भारत में सार्वभौम मुगल शासकों की परंपरा का आरंभ हुआ। उनमें भी अकबर जैसा दुरदर्शी, महाप्रतापी और महत्वाकांक्षी शासक था। ऐसी स्थिति में राव सुर्जन जैसे वीर के लीए भी, उसकी अधिनता स्वीकार करने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नही था। इसके साथ–साथ अनेक राजपूत शासकों ने अकबर की अधिनता स्वीकार कर ली थी, जिनमें मानसिह, भगवानसिंह आदि। कई शासकों ने तो अकबर से वैवाहिक संबंध भी स्थापित कर लिए थे। ऐसी समस्त परिस्थितियों को देखते हुए हाड़ाओं ने भी उनकी अधिनता स्वीकार कर ली।[11]

अकबर के दरबार में राव भोज एक बहुत ही शक्तिशाली सरदार थे। उनका मुगल दरबार में बहुत ही सम्मान था। कई युद्धों में उन्होने अपने आप को उद्‌भट यौद्धा के रूप में सिद्ध किया था। जिसका ज्वलंत उदाहरण अहमदनगर का किला था। अहमदनगर के इस घेरे में उन्होने जिस शक्ति और कुशलता का परिचय दिया। उससे प्रसन्न होकर अकबर ने उनको पुरूस्कार स्वरूप एक हाथी प्रदान किया और उनके नाम पर एक बुर्ज बनवाई। जिसको भोज बुर्ज के नाम से जाना जाता है। इस युद्ध की पहचान अहमदनगर की वीर रमणी चाँदबीबी के कारण है, जो अपनी 700 वीर दासीयों के साथ मारी गई और इतिहास में अमर हो गई थी। राव भोज के पुत्रों की संख्या तीन थी। ह्रदयनारायण, केशवदास और रतन। इन्ही में राव रतन बड़े प्रसिद्ध हुए है।[12]

पलायथा, रामगढ़, सीसावली आदि के क्षैत्र, जो कि चम्बल नदी के दाहिनी ओर के इलाके थे, ये इलाके हाड़ा शासको की अधिनता को स्वीकार कर चुके थे। मऊ में खींची शासको ने बड़ा लंबा संघर्ष किया और यहाँ तक की कोटा राज्य के कई इलाकों पर उनका अधिपत्य स्थापित हो गया था। अब चुंकि राव रतन का समय था। राव रतन एक बहुत ही शक्तिशाली शासक था। उसका मुगल दरबार में बड़ा प्रभाव था। अत: उसने अकबर की सहमति से हाड़ाओं पर चहुँओर से आक्रमण करना आरंभ कर दिया। राव रतन ने उनके महलों एवं उनके परगनों को अधिकार में कर लिया। इस युद्ध में राव रतन के साथ में उसके दोनो भाई और दोनों पुत्र माधोसिंह व हरिसिह सम्मिलित थे।[13]

जब राव रतन और ह्रदयनारायण शहजादा खुर्रम के विद्रोह को समाप्त करने के लिए पहुँचे। उस समय में राजनीति में बेगम नूरजहाँ का प्रभाव था। बेगम नूरजहाँ ने अपने सभी राजपूत और मुसलमान सरदारों को इस विषय को सुलझाने के संबंध में आमंत्रित किया। इस समस्या का समाधान करने के लिए महाबतखां और अनेक राजपूत सरदार कटिबद्ध हो गए। इसी विद्रोह का समाधान हेतु अपने दोनो पुत्रों माधोसिंह और हरिसिंह के साथ राव रतन अपने बूंदी के राज्य से निकले और ह्रदयनारायण ने कोटा से अपनी सेना के साथ में प्रस्थान किया। यहीं से कोटा के राज्य के स्वतंत्र अस्तित्व की शुरूआत हुई। राव रतनसिंह ने अपने पुत्र माधोसिंह को कोटा का शासक नियुक्त कर दिया और बादशाह शाहजहॉ ने भी इसकी सहमति प्रदान कर दी। जब राव रतनसिंह को एहसास हुआ कि माधोसिंह को बादशाह शाहजहॉ चाहते है, और उनके मन में उनके प्रति प्रेम है, तो राव रतनसिंह ने अपने पुत्र माधोसिंह को आठ परगने और प्रदान कर दिए और उसको कोटा राज्य का स्वतंत्र शासक नियुक्त करवा दिया। जब राव रतनसिंह का देहांत हो गया एवं उसके देहांत की खबर शाहजहॉ के पास पहुँची तो उसने माधोसिंह को नियमानुसार कोटा राज्य का शासक मान लिया और इसका फरमान जारी किया। जब माधोसिंह कोटा का शासक बन गया और शाहजहाँ के एक मुख्य वजीर खानेजहाँ लोदी ने विद्रोह कर दिया। तब माधोसिह ने शाहजहाँ के आदेशानुसार बहादुरी से युद्ध कर अपनी बर्छी से उसकी हत्या कर दी और उसके दो पुत्रों की भी हत्या कर दी। उसने खानेजहॉ और उसके दोनो पुत्रों का सिर काटकर बादशाह की सेवा में प्रस्तुत किया, तो बादशाह शाहजहाँ ने प्रसन्न होकर माधोसिंह को चार परगनों क्रमश: जीरापुर, खैराबाद, चेचट और खिलचीपुर प्रदान किए। इस वीरतापूर्ण कार्य के कारण माधोसिंह के मनसब में 500 की वृद्धी की गई और उसको तीन हजारी मनसबदार बना दिया। जब माधोसिंह गद्दी पर बैठा, उस समय में उसके राज्य में परगनों की संख्या 14 थी। खानेजहॉ का वध करने के पश्चात् बादशाह शाहजहाँ ने उसको 17 परगने और दिए। माधोसिंह ने यह वीरता केवल भारत में ही नही दिखाई, वरन् बल्ख में जिस वीरता के साथ में उसने वहॉ के दुर्ग की रक्षा की, उससे बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ और उसको बूंदी नरेश से बारां और मऊ के परगने छीनकर उसको प्रदान कर दिए। इस संबंध में वंश भास्कर में लिखा है–

कुप्पि बुंदीस प्रति बचनादिकन। परगना मुख्य बारां मऊ छिन्नि लिय । द्वैहिलखि माधव हि तत्थ सुलतान दिया।[14]

इस प्रकार माधोसिंह एक शक्तिशाली शासक थे। इन्होने अपनी वीरता से बहुत बड़े क्षैत्र पर अपना अधिकार कर लिया था और मुगल बादशाह शाहजहाँ से उनकी व्यक्तिगत मित्रता के कारण अपनी मृत्यु तक 2000 ग्रामों पर उनका अधिकार था। कोटा राज्य का सबसे उपजाऊ क्षैत्र पर उस समय में माधोसिंह का अधिकार था।

राजगढ़ के उमट परमार – उमट परमारों के संबंध में उनकी उत्पत्ति के संबंध में एकरूपता का अभाव है। बड़वों एवं भाटों ने उनकी उत्पत्ति के संबंध में लिखा है, कि इनका संबंध धरणी वराह के वंश में उत्पन्न सुमराओ से हुआ है। गौरी शंकर ओझा के अनुसार संवत् 1050 में आबू के शासक

धरणी वराह के वंशजों से उमट परमारों की उत्पत्ति हुई है। एक अन्य मत के अनुसार इनकी उत्पत्ति पालनपुर गुजरात के उमरा गाँव से हुई है, इसी आधार पर ये उमट परमार कहलाए। क्षत्रिय जाति की सूचि पुस्तक के आधार पर ये उदयादित्य के वंश में उत्पन्न धवल के वंशज ऊमट परमार के वंशज है। हांलाकि इस संबंध में परस्पर अंतर्विरोध हैं। एक अन्य मत के अनुसार राजगढ़ और नरसिंगगढ़ क्षैत्र के ऊँमट परमार सिंध प्रदेश के क्षैत्र में आए, फिर वहाँ से वे आबू की ओर से मध्यप्रदेश पहुँचे। एक अन्य मत के आधार पर अमरकोट की स्थापना ऊमरा शासकों ने की और वही से इनका आगमन मध्यप्रदेश में हुआ। इस प्रकार उमरा शासकों के वंशज ऊमट परमार है। अत: राजगढ़ और नरसिंगगढ़ राज्य के वंशज ऊमट परमार है।[15]

एक अन्य मत के आधार पर इनका आदि पुरूष परमार वंश के आदि पुरूष एवं संस्थापक भोज राजा के वंशज मुंगराव के वंशज रहे है। मुंगराव की मुख्य रानी के दो पुत्र थे, उमरसी और सुमरसी। मुंगराव ने अपनी दूसरी रानी के पुत्र झेलर जिसका एक नाम झांगलजी भी था। उसको अपना उत्तराधिकारी चुना। इससे उनके दोनो पुत्र उमरसी और सुमरसी नाराज होकर आबू की ओर चले गए। फिर वहाँ से वे सिन्ध के क्षेत्र की ओर चले गए। इन्होने वहाँ के शासक को परास्त किया और सिन्ध के क्षैत्र पर अपना अधिकार कर लिया। अधिकार करने के पश्चात् उमरसी ने वहाँ पर अमरकोट का किला बनाकर उसको अपनी राजधानी बनवाया। उमरसी ने अपने भाई को अमरकोट का क्षेत्र सौंपकर उसने आबू की ओर जाकर वहाँ के किले दट पर अपना अधिकार कर लिया। इसी महत्वपूर्ण शासक उमरसी के ही वंशज उमट परमार के नाम से प्रसिद्ध हुए। इसी उमरसी के वंशज ही राजगढ़, नरसिंगगढ़, धार, उज्जैन आदि स्थानों पर गए और इन्होने अपने राज्य स्थापित किए। उमट परमार मालवा में आकर नरसिंगगढ़ और राजगढ़ के राज्यों के रूप में विभाजित हो गए।[16]

खिलचीपुर राज्य और उमट राज्य में संघर्ष – तत्कालीन स्त्रोतो के आधार पर विदित होता है, कि उग्रसेन को प्रारंभिक अवस्था में राजगढ़ राज्य से संघर्ष करना पड़ा। उग्रसेन ने अपना राज्य खिलचीपुर में स्थापित किया तो राजगढ़ के उमट प्रारंभिक अवस्था में ही उग्रसेन से संघर्ष करने लग गए। राजगढ़ राज्य के शासक मोहनसिंह से संघर्ष करते हुए, खिलचीपुर राज्य के संस्थापक उग्रसेन मारे गए। इसी के साथ ब्यावरा के उमट राज्य ने भी संघर्ष छेड़ दिया और इस संघर्ष में खिलचीपुर राज्य के 300 वीर सैनिको ने अपनी जान गवांई।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

1. चौहान कुल कल्पद्रुम (चौहान राजपूत की शाखाओं का इतिहास एवं वंशवृक्ष) भाग-प्रथम देसाई लल्लुभाई भीमभाई द्वितीय संस्करण 2005 प्रकाशक-राजस्थानी ग्रंथागार सोजती गेट, जोधपुर पृष्ठ संख्या 107
2. खिलचीपुर राज्य के बड़वा की हस्तलिखित पोथी
3. चौहान कुल कल्पद्रुम (चौहान राजपूत की शाखाओं का इतिहास एवं वंशवृक्ष) भाग-प्रथम देसाई लल्लुभाई भीमभाई द्वितीय संस्करण 2005 प्रकाशक-राजस्थानी ग्रंथागार सोजती गेट, जोधपुर पृष्ठ संख्या 111
4. वंश भास्कर,द्वितीय भाग पृष्ठ 1621
5. कोटा राज्य का इतिहास भाग-1 डॉ.मथुरालाल शर्मा द्वितीय संस्करण 2008 ई.प्रकाशक-राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर पृष्ठ सं.36
6. कोटा राज्य का इतिहास भाग-1 डॉ.मथुरालाल शर्मा द्वितीय संस्करण 2008 ई. प्रकाशक -राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर पृष्ठ सं.39
7. वंश भास्कर,तृतीय भाग पृष्ठ 2029
8. वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ 2238
9. वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ 2238
10. कोटा राज्य का इतिहास भाग-1 डॉ.मथुरालाल शर्मा द्वितीय संस्करण 2008 ई. प्रकाशक-राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर पृष्ठ सं.45
11. कोटा राज्य का इतिहास भाग-1 डॉ.मथुरालाल शर्मा द्वितीय संस्करण 2008 ई.प्रकाशक -राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर पृष्ठ सं.49
12. वंश भास्कर पृष्ठ 121
13. कोटा राज्य का इतिहास भाग-1 डॉ.मथुरालाल शर्मा द्वितीय संस्करण 2008 ई.प्रकाशक -राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर पृष्ठ सं.53
14. वंशभास्कर तृतीय भाग पृष्ठ 2630
15. क्षत्रिय राजवंश, रघुनाथसिंह कालीपहाड़ी पंचम संस्करण वि.सं.2066 प्रकाशक-ठा.मल्लूसिंह स्मृति ग्रंथागार काली पहाड़ी (झुन्झुनू-राजस्थान)
16. क्षत्रिय राजवंशों का इतिहास, देवीसिंह मंडावा प्रथम संस्करण 2010 प्रकाशक-राजस्थानी ग्रंथागार, सोजती गेट जोधपुर (राजस्थान)

****